A Pratibha Spandan Journal

SWAR SINDHU
(National Peer-Reviewed/Refereed Journal of Music)
ISSN 2320–7175 (O) | Volume 13, Issue 02, July-December, 2025

देव परंपरा और लोकसंगीत: हिमाचल प्रदेश के विशेष संदर्भ में

Dr. Manoj Verma
Fellow, Indian Institute of Advanced Study, Shimla, Himachal Pradesh

OPEN ACCESS CC BY

सारांश

हिमाचल प्रदेश देवी देवताओं की वह धरा है जहां के बाशिंदों के जीवन में देवतंत्र के विशेष मायने है। समाज में देवतंत्र का ताना - बाना कुछ इस तरह से व्याप्त है कि यहाँ के जन समाज द्वारा सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक, आर्थिक व व्यक्तिगत सभी प्रकार के कार्य देवता की अनुमति व परामर्शानुसार ही सम्पन्न किए जाते है। कण-कण में देव-वास के सिद्धांत में विश्वास रखने वाली इस देवधरा पर देवता की उपस्थिति, आस्था, अनुष्ठान तथा सामाजिक संरचना लोकसंगीत से गहराई से जुड़ी हुई है। यहाँ देवताओं को प्रसन्न करने हेतु ना केवल विभिन्न यज्ञों, आयोजनों, उत्सवों, त्योहारों आदि को मनाने की पुरातन रीतियाँ चलन में है बल्कि विभिन्न अवनद्ध, सुषिर, घन व तंत्री वाद्यों को बजाने का पुरातन विधान भी प्रचार में है। ढोल, नगाड़ा, शहनाई, करनाल, रणसिंघा, गुजु, बाम, भाणा जैसे वाद्यों के वादन और विविध गीत, लोकधुनों के माध्यम से देवता की पूजा, आगमन, निर्णय, संवाद और सामूहिक उत्सवों की अभिव्यक्ति होती है। यह अध्ययन लोकसंगीत को धार्मिक व दैवीय संचार, सामाजिक नियंत्रण, सामुदायिक एकता और परंपरा-सततता का जीवंत माध्यम मानकर इसके सांस्कृतिक महत्त्व को स्पष्ट करता है जिसका उद्देश्य देवपरंपरा के मुख्य घटक के रूप में लोकसंगीत का अध्ययन प्रस्तुत करना है। हिमाचल की देवपरंपरा में लोकसंगीत की उपादेयता को देखते हुए यह कहा जा सकता है कि आधुनिकता के प्रभाव के बावजूद देव परंपरा में लोकसंगीत की प्रासंगिकता आज भी पुरातन स्वरूप के अनुरूप ही मजबूत व अनिवार्य रूप में हमारे समक्ष है, जो क्षेत्रीय सांस्कृतिक पहचान की प्रमुख वाहक है।

बीज शब्द : *देव परंपरा, लोकसंगीत, देव संगीत, देव गीत, देव ताल, हिमाचल प्रदेश।*

प्रस्तावना

पर्वत शिरोमणि हिमालय के पश्चिम में बसा हिमाचल प्रदेश प्राचीन काल से ही देवी-देवताओं, ऋषि-मुनियों, किन्नर, गंधर्व, यक्ष व नाग इत्यादि की जन्म एवं कर्मभूमि रही है। यहां की भूमि का सम्बन्ध परशुराम, माता रेणुका, बाबा बालक नाथ, ऋषि जमदग्नि जैसे महान योगियों व सिद्ध विभूतियों से रहा है। इस कारण हिमाचल की पवित्र भूमि अपने आप में पूजनीय तथा वंदनीय है, जिसे देवभूमि हिमाचल के नाम से विभूषित किया गया है। यह प्रदेश पहाड़ी क्षेत्र होने के चलते अपनी भौगोलिक परिस्थितियों तथा यातायात की सुविधाओं के आभाव के कारण लंबे समय तक विदेशी आक्रान्ताओं तथा आक्रमणकारियों से बचा रहा, जिस कारण यहां की संस्कृति अपने ही विशिष्ट रूप से पुष्पित एवं पल्लवित होती रही। इसके प्रत्यक्ष उदहारण वर्तमान हिमाचल प्रदेश के विभिन्न जनपदों व क्षेत्रों में प्रचलित विभिन्न रीति-रिवाजों, संस्कारों, लोक संस्कृति, विचारधाराओं, मान्यताओं आदि के अनोखे व अलग स्वरूप में देखने को मिलते है, जिसका प्रभाव यहाँ के सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक, सांस्कृतिक, आध्यात्मिक जीवन आदि सभी में स्पष्ट रूप से देखने को मिलता है। "प्राचीन काल में यहां के लोगों का मुख्य व्यवसाय कृषि, कड़ाई, बुनाई तथा पशुपालन था।"[1] आज तो यहां पर विभिन्न प्रकार के फलों, सब्जियों व अनाज आदि का उत्पादन किया जाता है लेकिन "पुराने समय में यहाँ के लगभग सभी क्षेत्रों में गेहूं, चावल, जौ, मक्का, कोदा, चौलाई, मंडवा, सरसों, चीणां, गन्ना, अफ़ीम, मक्की, बाथु, माश, कुलथ, ककड़ी व विभिन्न दालों आदि का उत्पादन किया जाता था।"[2,3] इस प्रकार यह अनुमान लगाया जा सकता है कि पुराने समय में हिमाचल प्रदेश के लोग आर्थिक दृष्टि से किसी बाहरी सभ्यता पर ज्यादा निर्भर नहीं थे। यह भी एक कारण रहा कि हिमाचल प्रदेश की संस्कृति बाहरी संस्कृतियों से लंबे समय तक कटी रही और अपनी ही परंपराओं, विचारधाराओं, विश्वासों तथा मान्यताओं आदि के साथ विकसित होती रही। इस के दूरगामी परिणाम ही आज की यहाँ की विशिष्ट संस्कृति के रूप में हमें देखने को मिलते है, जिसमें यहाँ की विशाल देवपरंपरा भी एक है। "यहाँ की देवपरंपरा में ब्रह्मा, विष्णु, महेश, महाकाली, हनुमान के अवतारों की पूजा अर्चना के साथ-साथ महाभारत, रामायण, पुराण, वेद इत्यादि से संबंधित नायकों तथा नायिकाओं को कुल-देवी, कुल-देवता तथा दोषीयों (देवी-देवताओं) के रूप में पूजने का प्राचीन विधान प्रचार में है।"[4] इसके अतिरिक्त यहां पर हिंदू धर्म से संबंधित विभिन्न देवी-देवताओं की पूजा अर्चना का पुरातन विधान भी प्रचलित है जिसमें लोक संगीत पुरातन समय से ही एक अहम भूमिका निभाते आ रहा है जो अपने गीत (गायन) और बाज़ (वादन) दोनों स्वरूपों में हिमाचल की देवपरंपरा में लंबे समय से एक मुख्य पहलू के रूप में प्रतिष्ठित है।

SWAR SINDHU
(National Peer-Reviewed/Refereed Journal of Music)
ISSN 2320–7175 (O) | Volume 13, Issue 02, July-December, 2025

हिमाचल और देव संस्कृति

विभिन्न ऐतिहासिक स्त्रोतों के अध्ययन से पता चलता है कि "पुरातन समय में हिमाचल प्रदेश एक ऐसा पहाड़ी प्रदेश हुआ करता था जिस पर विभिन्न राक्षसों व असुरों का राज हुआ करता था, जो यहाँ के लोगों को मनमाने तरीकों से परेशान किया करते थे। एसे में कुछ दिव्य, अवतारी व चमत्कारी पुरुषों, शक्तियों आदि ने इन राक्षसों का नाश किया और आम जनमानस को इनके चंगुल से मुक्त करवाया।"[5,6] इसके पश्चात इन्हे स्थानीय लोगों द्वारा देवता के रूप में पूजा जाने लगा और यह परंपरा पीड़ी दर पीड़ी आगे बड़ती गई और अपने वर्तमान स्वरूप तक पहुंच पाई। यही कारण है की आज यहां के प्रत्येक गाँव, गली, मोहल्ले, चोटी, चौराहे इत्यादि में किसी न किसी देवी या देवता की देउठी, मंदिर, थानी या चौंरी (देवता के बैठने या रुकने का स्थान) अवश्य देखने को मिलती है (आकृति 1)।

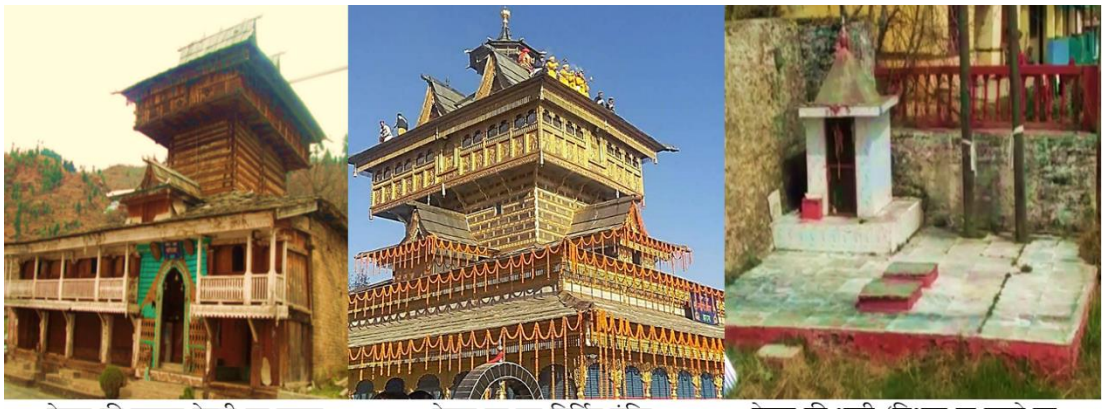

देवता की पुरातन देवठी का नमूना | देवता का नव निर्मित मंदिर | देवता की थानी (विश्राम या रुकने का स्थान)

(आकृति: 1)

हिमाचल की संस्कृति में दैऔ-दोषी (देव-तंत्र) का ताना-बाना इतना मजबूत है कि यहां पर प्रत्येक कार्य देवता की आज्ञा व निर्देशानुसार ही सम्पन्न किया जाता है। किसी भी शुभ कार्य का प्रारंभ देवी-देवता के सम्बोधन से किया जाता है, यदि किसी कार्य में स्थानीय देवी-देवता अपनी असहमति व्यक्त करते हैं तो उस कार्य को छोड़ दिया जाता है। देवी-देवता की आज्ञा की अवहेलना करना दोष (देवता का क्रोध) व पाप का भागीदार बनना समझा जाता है. प्रत्येक साज़े-ब्रेज़े (सक्रांति), खोड़े-खलातर (देवता के त्यौहार) इत्यादि में देवी-देवता की विधिनुसार पूजा-अर्चना की जाती है और उन्हें प्रसन्न करने हेतु भेंट प्रदान की जाती हैं जिसे 'भेटा' कहा जाता है। यह भेटा अक्सर दस या बीस रूपए के सिक्के या नोट होते है। कभी-कबार मनोकामना के पूर्ण होने पर पशु बलि प्रतिबंधित होने के पश्चात धूप-पाची (विशेष मिश्रण), धनैरा (धूप चढ़ाने का विशेष उपकरण), गरी-गोला, ध्वजा, सोने व चांदी का बना टीका या पैसे भेंट के रूप में चढ़ाए जाते है। देवी देवताओं मे इस अपार श्रद्धा के चलते यहाँ की संस्कृति में देव-परंपरा का ताना-बाना कुछ ऐसे विकसित हुआ है कि समाज में मनाए जाने वाले अधिकांश उत्सव, यज्ञ, मेले व तीज-त्यौहार जैसे जातर, शांत, भूंडा, खींण, बिशु, खलात्तर, श्रोणयाल्टी, पाँजोई, जागरा (जागरण), चोइतोरी आदि देवी-देवताओं से ही संबंधित है। अत: यह प्रभावी तौर पर कहा जा सकता है कि हिमाचल की संस्कृति में देव परंपरा का विशेष स्थान है जिसके आभाव में हिमाचल की संस्कृति की कल्पना तक नहीं की जा सकती।

शोध उद्देश्य

इस शोध का उद्देश्य हिमाचल प्रदेश की देवपरंपरा को केंद्र में रखते हुए यहाँ के लोक संगीत का विश्लेषणात्मक अध्ययन प्रस्तुत करना है।

शोध विधि

यह शोध गुणात्मक प्रकार का शोध है जिसमे एथनोम्यूज़िकोलॉजीकल पद्धति का प्रयोग कर दतों का संकलन किया गया है।

देवी देवता का ताना-बाना और लोक संगीत

यदि देव परंपरा के स्वरूप की बात की जाए तो हिमाचल प्रदेश में देवी तथा देवता के प्रतीक के रूप में मिश्र धातु, अष्टधातु, सोना, चांदी, पत्थर या लकड़ी से इत्यादि से बने मोहरों तथा मूर्तियों की पूजा अर्चना का विधान है. इन मोहरों की पूजा-अर्चना देवता के प्रतीक के रूप में की जाती है. "देवताओं के प्रतीक इन मोहरों में से अधिकांश को चमत्कारी रूप से प्रकट हुआ माना जाता है"[7] जिनका शृंगार तथा साज-सज्जा नित्य मंदिर के पुरोहित द्वारा सुनिश्चित की जाती है। विभिन्न त्योहारों, यात्राओं, मेलों इत्यादि के अवसर पर इन मोहरों को "देवता की पालकी - जिसे रथ कहा जाता है"[8] में सुशोभित किया जाता है। इनमे सबसे ऊपर मुख्य मोहरा तथा उसके नीचे अन्य मोहरें लगाए जाते है (आकृति 2)। लेकिन यह जरूरी नहीं की देवता की सभी पालकियों के बनावट एक समान हो, रोहरु, रामपुर, किन्नौर आदि के कुछ देवताओं के रथ गोलाकार आकृति में भी देखे जा सकते

SWAR SINDHU
(National Peer-Reviewed/Refereed Journal of Music)
ISSN 2320–7175 (O) | Volume 13, Issue 02, July-December, 2025

है जिसमें देवता के मोहरे 'गोलाकार रथ' के चारों ओर लगाए जाते है (आकृति 2)। यह रथ या पालकी दो से चार लोगों के द्वारा उठाई जाती है व निश्चित गंतव्य पर पहुंचाई जाती है। इस समय देवता के साथ उनके कारदार (प्रबंधक), भण्डारी, माली (देवता द्वारा चुना गया विशेष संदेशवाहक), बाज़गी (वादक) आदि सभी उपस्थित होते है। यह रथ लकड़ी का बना होता है जिसे सोने, चांदी और लाल या पीले चटकदार कपड़े से ढ़क कर सजाया जाता है। देवता के रथ के शीश पर सोने या चांदी का छत्तर लगा रहता है और साथ में चांदी या सोने की छड़ियाँ देवता की शान को प्रस्तुत करती है। लंबी यात्रा तय करने हेतु देवता की छोटी पालकी जिसे 'ज़मानटु' कहा जाता है का प्रयोग देवता के मुख्य मोहरे को गंतव्य तक पहुचाने हेतु किया जाता है (आकृति 2)। इस दौरान ढ़ोल-ढ़माके, नृत्य, संगीत आदि के साथ देवता की झांकी निकलती है जिसमे सभी जन देवता की आस्था में उन्हे प्रणाम करते है और आशीर्वाद ग्रहण करते है।

देवता (देवता शालू महाराज, बारह बीश-मेलठी) की मुख्य पालकी जिसे 'रथ' भी कहा जाता है।

देवता (श्री जाबल नारायण जी, छुआरा वैली, रोहडू) का गोलाकार रथ।

देवता की छोटी पालकी जिसे 'जमानटु' कहा जाता है।

(आकृति: 2)

यदि हिमाचली देवपरंपरा में लोकसंगीत की बात की जाए तो लोक संगीत यहाँ की देव परंपरा का मुख्य पहलू है। हिमाचल में देवता या देवी किसी राजा या रानी की भांति है जिसकी प्रात: पूजा-आरती के पश्चात, प्रसाद लगाना, मुख प्रक्षालन, शृंगार, साज-सज्जा आदि सभी क्रियाओं के पश्चात ही किसी उत्सव संबंदी दौरे या यात्रा संबंधी कार्य किए जाते है। यह प्रक्रिया प्रतिदिन दोहराई जाती है, जिसमे यहाँ की बहुरंगी संस्कृति का दर्पण कहे जाने वाला 'लोक संगीत' विशेष भूमिका अदा करता है। प्रात: की तपोल (प्रात: की पूजा) से लेकर साँय की बेल (साँय काल की पूजा) तक देव परंपरा से जुड़े सभी कारिज (काम काज) लोक संगीत की विभिन्न लोक शैलियों में सम्पन्न किए जाते है, जिसके अंतर्गत संगीत के दोनों रूप गायन व वादन का बखूबी प्रयोग देखने को मिलता है (आकृति 3)।

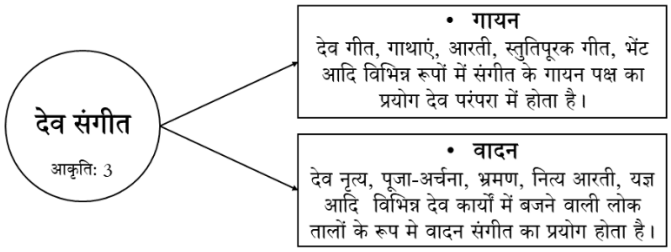

आकृति: 3

यदि गायन पक्ष की बात की जाए तो हिमाचल में देवी-देवताओं को प्रसन्न करने हेतु विभिन्न प्रकार के उत्सवों, मेलों, त्योहारों आदि का आयोजन किया जाता रहता है, जिनमें विभिन्न प्रकार के लोक गीत, अनिबद्ध गीत, लोक गाथाएं, भजन, आरती व भेंट आदि को गाने के पुरातन विधान का पालन आज भी अनिवार्य रूप से किया जाता है। इसके अंतर्गत विभिन्न लोकगीत शैलियों जैसे 12 मात्राओं की ढीली नाटी, 16 मात्राओं की मुंजरा नाटी, 12 मात्राओं की माला नाटी, 12 मात्राओं की ताउली नाटी के साथ साथ दादरा, कहरवा, रूपक व दीपचंदी आदि तालों का प्रयोग करते हुए देवी-देवताओं की आराधना व गुणगान संबंधी लोक गीत, नाटियाँ, आरती व स्तुतियाँ प्रस्तुत की जाती है। देव परंपरा से संबंधित इन देव गीतों में यहां के सामाजिक जन जीवन में प्रचलित विभिन्न नाटी गीतों के साथ-साथ विशिष्ट आध्यात्मिक लोक गीतों जैसे लामण, ब्रह्मखाड़ा, छाड़ी, भेंट, बिरसू, आरती आदि का गायन बहुत प्रचलित है, जिसका किसी भी सामाजिक या लौकिक उत्सव से कोई लेना देना नहीं होता; केवल आध्यात्मिक या देव उत्सवों पर ही इन विशिष्ट लोकगीतों का गायन किया जाता है। यदि देव लोकगीतों के साहित्य की बात की जाए इनका साहित्य देवता की उत्पत्ति, दुष्टों व राक्षसों के संहार, विशिष्ट घटनाओं, देवता के चमत्कारों, देव-यात्राओं, तथा देवता की स्तुति आदि पर आधारित होता है। इन लोकगीतों के द्वारा साधारण जनमानस अपने आध्यात्मिक भावों को स्वर, लय तथा लोक तालों के माध्यम से प्रस्तुत करते हैं, जिनका उद्देश्य देवी-देवता को

रिझाना या प्रसन्न करना होता है। देव गीतों साथ-साथ विभिन्न लौकिक एवं सामाजिक लोकगीतों का गायन भी विभिन्न देव-उत्सवों के अवसर पर अक्सर देखा जा सकता है जिसकी धुन में साधारण जनमानस के साथ-साथ देवता की पालकी भी नृत्य करने लगती है (आकृति 4)। हिमाचल में प्रचालित देव लोकगीतों के कुछ सुंदर उदहारण इस प्रकार है।

"देवा बकरालूआ लाओ आशूआ रोये

भूंडो मेरो स्पैलौ रो कौरदो न कोऐ...."[9]

इस देव गीत में देवता बकरालु (स्पैल, रोहरु) का अपने कार कारिंदों से संवाद प्रस्तुत किया गया है, कि किस प्रकार देवता भुंडा़ महायज्ञ (ऊपरी हिमाचल का सबसे बड़ा देव उत्सव) के आयोजन की जिद कर रहे है। यह गीत 16 मात्राओं की मुंजरा नाटी में निबद्ध करके गाया जाता है।

"तू भस्म धूड़े थोड़ा नाच़ै

धरती न चोड़े भोले इशरा

तू भस्म धूड़े थोड़ा नाच़ै...."[10]

यह गीत भगवान शिव व माता गौरा के विवाह से संबंधित कथा को गेय रूप में प्रस्तुत करता है। इस गीत का गायन 'खींण' नामक देव उत्सव पर नृत्य के साथ किया जाता है जो कि 12 मात्राओं की ब्रह्मखाड़ा ताल में निबद्ध करके गाया जाता है।

"घौहण बादे पौरज़ा (प्रजा) बूझदे न भैऔ

पांजौ मीहने च़ैहरै रौआ कूलौ रा दैऔ...."[11]

यह गाथा देवता शालू महाराज, बारह बीश (कुपड़ी मेलठी) के जन्म व तीर्थ यात्रा की कथा को प्रस्तुत करता है जिसका गायन देवता की जातर (मेला) के दिन नृत्य हेतु किया जाता है। यह गीत 12 मात्राओं की माला नाटी में निबद्ध करके गाया जाता है।

"हाटौ री देवीऐ तेरो मंदिरौ ऊंचो

धौज लाऊ ताखै हाँ पीऊले, मेरे चांई मौनौ रो हो सूंचों..."[12]

यह एक लामण गीत (अनिबद्ध गीत) का प्रकार है जो माता हाटेश्वरी की स्तुति में गाया जाता है, जिसमे किसी प्रकार की ताल का प्रयोग नहीं किया जाता। लामण गीतों का गायन देवता की जातर, खलात्तर आदि के अवसर पर भी किया जाता है, जिसमे स्त्रियाँ समूह में लामण गीत का गायन करती है और देवता की पालकी इस गीत को सुनते ही भागे-भागे इन स्त्रियों के पास आकर, इनकी ओर झुक जाती है (आकृति 4)।

"तू बर्मे न जाए रे राजा बर्मे न जाए

तेरी उनोहलिए राजा भिंगी का हुई

गावी सुई पौनदरौ राजा बाशटु दुई

तू बर्मे न जाए रे राजा बर्मे न जाए...."[13]

यह गीत देवता महासू के जन्म व दुष्टों के संहार संबंधी गाथा को प्रस्तुत करता है, जिसका गायन केवल देवता के 'जागरे' के अवसर पर ही किया जाता है। अन्य लौकिक उत्सवों पर इस गाथा का गायन निषेध है।

SWAR SINDHU
(National Peer-Reviewed/Refereed Journal of Music)
ISSN 2320–7175 (O) | Volume 13, Issue 02, July-December, 2025

देवता शालू महाराज 'लामण' गीत का गायन करती महिलाओं को आशीष प्रदान करते हुए।

देवता जाबल नारायण, रामणी नारायण, गोकसी नारायण जी के साथ-साथ समस्त जन नृत्य करते हुये।

देवता की शांत (शांति महायज्ञ) के अवसर पर स्थानीय जन व देवता महाराज नृत्य करते हुए।

(आकृति: 4)

यदि लोक संगीत के वादन पक्ष की बात की जाए तो वादन संगीत तो हिमाचल की देव परंपरा का मुख्य आयाम कहा जा सकता है. हिमाचली देव परंपरा से संबंधित ऐसा कोई भी कार्य या परंपरा नहीं है जो वादन संगीत के आभाव में सम्पन्न की जाती हो। लोक संगीत के वादन पक्ष के अंतर्गत हिमाचल प्रदेश में 'लोक वाद्यवृंद वादन' की परंपरा लंबे समय से देव परंपरा के मुख्य घटक के रूप में प्रतिष्ठित है, जिसके अंतर्गत वादकों का समूह विभिन्न अवनद्ध, घन तथा सुषिर वाद्यों जैसे ढोल, नगारा, बाम, भाणा, कंसाल, घंटी, थाली, शहनाई, करनाल, रणसिंघा, गुजु आदि वाद्यों का सामूहिक वादन प्रस्तुत किया जाता है (आकृति 5)।

बजंत्री गण देवता के समक्ष देव-तालों (जड़ी-भरत, दैरी) का वादन करते हुए, जिसमे वे विशिष्ट वादन शैली के अंतर्गत वाद्य यंत्रों को सिर पर उठाए हुए है।

घराने दार बजंत्री गण देवता की प्रात: कालीन पूजा के दौरान मंदिर प्रांगण में बैठ कर वाद्य वृंद वादन (लोकताल) करते हुए।

(आकृति: 5)

यह वादन देवता के अपने बजंत्रियों (वादकों) के द्वारा प्रस्तुत किया जाता है, जिन्हे ढाकी, तूरी या बाज़गी आदि नामों से भी जाना जाता है। ये बजंत्री 'मंगलामुखी' जाति से सम्बन्ध रखते है, जिनके भरण-पोषण का खर्च अक्सर देवता के द्वारा ही उठाया जाता है। वाद्यवृंद वादन की इस परंपरा में जहां "अवनद्ध वाद्यों पर विभिन्न देव-बाजों (ताल) जैसे हंडाउण, तैरी, आरती, नरोल, जड़ी-भरत आदि का वादन किया जाता है"[14] वहीं शहनाई वाद्य पर वैदिक व पौराणिक रीतीनुसार विभिन्न स्वरावलियाँ बजाई जाती है। इसकी विशेषता यह है कि इन देव तालों का वादन केवल देव उत्सवों पर ही किया जाता है, अन्य लौकिक या सामाजिक उत्सवों पर इनका वादन निषेध है। इन तालों के वादन से देवता की पालकी में एक शक्ति प्रवेश कर जाती है जिसके पश्चात देवता की पालकी खुद-ब-खुद हिलने-डुलने व हरकत करने लगती है। यदि वादन के स्वरूप की बात की जाये तो प्रात: की आरती से ही देवता के मंदिर में विशिष्ट तालों वादन शुरू हो जाता है, जैसे-जैसे देवी-देवताओं की पूजा आगे बढ़ती रहती है वैसे-वैसे तालों का स्वरूप तथा तालों में निहित रस, लय, चंचलता व गंभीरता आदि तत्व भी बदलते रहते है। हिमाचल में वृंदवादन की यह परंपरा केवल मंदिर तक सीमित न होकर, देवी देवताओं से संबंधित प्रत्येक उत्सव, त्यौहार, मेले, जा़तर, खंड, खलात्तर तथा रीति-रिवाजों आदि में मुख्य घटक का कार्य करती है, जिसमें पूजन के समय 'काँसी, आरती व नरोल', चलते समय 'हंडा़वण', संदेश देते समय 'दैरी' व दूसरे देवता से मिलते समय या कालकी (माँ काली) के आवाहन के समय 'जड़ी-भरत' व नृत्य करते समय 'ताउली नाटी' आदि तालों का वादन किया जाता है। इस प्रकार लोक संगीत का वादन पक्ष हिमाचल की देव परंपरा में विशिष्टता को लिय हुए है जिसके कुछ सुंदर उदहारण इस प्रकार है।

"धां ता धिन, धा ता तिट,तां तडां धिन, धां ता तिट"[15]

12 मात्राओं की यह ताल 'आरती ताल' के नाम से जानी जाती है जिसका वादन प्रात: कालीन पूजा में सम्पूर्ण वाद्य वृंद के साथ किया जाता है।

"धाक्ड़ धी, धा धा तिं, ताक्ड़ धीं, धा धा कड़कड़"[16]

यह ताल 10 मात्राओं की 'नौबत ताल' के नाम से जानी जाती है। 8 मात्राओं की इस ताल का वादन आरती के ठीक बाद देवता की पूजा के दौरान किया जाता है।

"झां ता ता घड़ां, झा ना घेघे ना"[17]

यह ताल 8 मात्राओं की 'घरेवणी ताल' के नाम से जानी जाती है, जिसका वादन विभिन्न देव उत्सवों, त्योहारों आदि के अवसर पर देवता के अपने गुर में प्रवेश करने के दौरान किया जाता है।

"झांण झांझां गिना, झांण झांझां तिरकित"[18]

यह ताल 6 मात्राओं की 'जागरा ताल' के नाम से जानी जाती है जिसका उद्देश्य भक्तिमय वातावरण का निर्माण करना होता है।

"धा ति ना, धा ति ना, धा ति ना, धा तिर तिर"[19]

यह ताल 12 मात्राओं की 'ताउली नाटी' ताल है। देवता के नृत्य के समय अक्सर इस ताल का वादन किया जाता है।

इस प्रकार कहा जा सकता है कि देव गीतों और देव तालों से अलंकृत हिमाचल का देव संगीत न केवल यहाँ की पुरातन देव संस्कृति के विभिन्न रंगों को प्रस्तुत करता हैं बल्कि मुख्य घटक के रूप में हिमाचल की पुरातन परंपरा, संस्कृति, रीति-रिवाजों इत्यादि के प्रचार-प्रसार व संरक्षण में भी महत्वपूर्ण भूमिका अदा करता हैं।

निसंदेह लोक संगीत को हिमाचल की देव परंपरा के उस मूल तत्व से अभिहीत किया जा सकता है जिसमें यहाँ की देव संस्कृति के विभिन्न रंगों, रीति-रिवाजों, परंपराओं व विचारधाराओं आदि के जीवंत दर्शन देखने को मिलते है (आकृति 6)। "लोक संगीत यहाँ पर मात्र आनंद का पर्याय न होकर दैवीय आराधना का मुख्य स्त्रोत है"[20] जिसके माध्यम से विभिन्न गायन व वादन शैलियों के रूप में देवता को प्रसन्न करने व उनका ध्यान आकर्षित करने का प्रयास किया जाता है। यही कारण है कि हिमाचल प्रदेश में लोक संगीत आम जनमानस के भावों को देवी-देवताओं के समक्ष रखने व उनका गुणगान करने हेतु मूल स्त्रोत के रूप में प्रयोग किया जाता है।

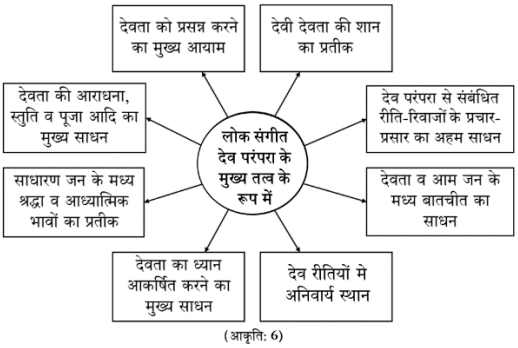

(आकृति: 6)

यहाँ का लोकसंगीत मनोरंजन के साथ-साथ देवता के प्रति श्रद्धा, आस्था, भक्ति-भावना का प्रतीक है, जिसके अंतर्गत गीत, गाथाओं व वाद्य वृंद वादन द्वारा देवी-देवताओं की पूजा, आरती, स्तुति आदि सभी कार्यों को सम्पन्न किया जाता है। "हिमाचल की देव परंपरा में लोक संगीत एक ऐसा महत्वपूर्ण तत्व है जिसका प्रयोग पूजा-पाठ आदि सभी विधियों में अति अनिवार्य है, जिस के आभाव में देवता का क्रोध - महामारी, आपदा, आगजनी, देव-दोष आदि के रूप में बरस सकता है।"[21] यही कारण है की हिमाचल प्रदेश में लोक संगीत देव-स्तुति का मुख्य साधन भी है। जब भी क्षेत्र के बड़े व मुख्य देवता किसी दूसरे गांव या इलाके में भ्रमण व त्योहारों में अपनी भागीदारी निभाने हेतु प्रस्थान करते है तब वे अपने साथ बीस से भी ज्यादा बजंत्रीयों को लेकर चलते है जो विभिन्न देव तालों के वादन द्वारा समस्त वातावरण को भक्तिमय बना देते है। वाद्य वृंद वादन की यह परंपरा देवता को एक राजा की भांति प्रस्तुत करता है और उनकी शान को दर्शाती है। इस से देव परंपरा और लोक संगीत का आपसी साम्य आसानी से स्पष्ट होता है। इन सब के अतिरिक्त देव-परंपरा ही वह पुरातन रिवाज है जिसके माध्यम से आज भी हिमाचल की पुरातन परंपराएं, रीति रिवाज, संस्कृति,

मान्यताएं व विचारधाराएं आदि पीड़ी दर पीड़ी आगे बड़ रही है, जिसके प्रचार-प्रसार व संरक्षण में लोक संगीत इतिहास के विभिन्न उतार-चड़ावों एवं बदलावों से गुजरते हुए महत्वपूर्ण भूमिका निभाता आ रहा है।

निष्कर्ष

लोक संगीत हिमाचल की देव परंपरा का वह मुख्य पहलू है जो हिमाचल में देवी देवताओं की विशाल व पुरातन परंपरा के वहन के साथ-साथ देव परंपरा को रोचकता व रंजकता रूपी तत्वों से अभिहीत करता है, जिसके द्वारा देवपरंपरा से संबंधित पुरातन इतिहास को विभिन्न गीतों, गाथाओं आदि के रूप में ना केवल संरक्षित व संवर्धित किया जा सका बल्कि देवपरंपरा से संबंधित विभिन्न लोक रीतियों, मान्यताओं व परंपराओं का प्रचार-प्रसार भी संभव हो पाया। अत: कहा जा सकता है की लोकसंगीत हिमाचल की देव परंपरा का मुख्य घटक है।

संदर्भ सूची

1. Gazetteer of the kangra district - Part 2 to 4 – Kullu, Lahul and Spiti – 1897, Punjab Government, New Delhi, Indus Publishing Company, 1899, pp 75 - 100
2. Punjab States Gazetteer volume - 8, Gazetteer of the Simla hill states 1910, New Delhi, Indus Publishing Company, 1910, pp 46 - 49
3. Gazetteer of the kangra district - Part 2 to 4 – Kullu, Lahul and Spiti – 1897, Punjab Government, New Delhi, Indus Publishing Company, 1899, pp 77 - 78
4. Charak, Sukhdev Singh, History and Culture of Himalayan States – Volume 3 – Himachal Pradesh – Part three, New Delhi, Light and Life publishers, 1979, pp 90 - 105
5. Punjab States Gazetteer volume - 8, Gazetteer of the Simla hill states 1910, New Delhi, Indus Publishing Company, 1910, pp 25
6. सांजटा, हरीश, श्री रूद्र जी महात्मय देवधार पुजारली – 4, शिमला, महाजन प्रिंटिंग प्रेस - संजौली, 2010, पृ॰ 17 – 18
7. ठाकुर, सूरत, हिमाचल की देव – भार्थाऐं, हरियाणा, अक्षरधाम प्रकाशन, 2013, पृ॰ 46
8. Charak, Sukhdev Singh, History and Culture of Himalayan States – Volume 3 – Himachal Pradesh – Part three, New Delhi, Light and Life publishers, 1979, pp 30
9. चौहान, मोहन सिंह, साक्षात्कार, मनोज वर्मा द्वारा लिया गया, 3 नवंबर 2023
10. वही
11. थौटा, जोदी राम, साक्षात्कार, मनोज वर्मा द्वारा लिया गया, 4 नवंबर 2023
12. वही
13. चौहान, विक्की, साक्षात्कार, मनोज वर्मा द्वारा लिया गया, 6 नवंबर 2023
14. सांजटा, हरीश, श्री रूद्र जी महात्मय देवधार पुजारली – 4, शिमला, महाजन प्रिंटिंग प्रेस - संजौली, 2010, पृ॰ 55
15. शर्मा, डॉ॰ राजीव, साक्षात्कार, मनोज वर्मा द्वारा लिया गया, 30 मार्च 2024
16. वही
17. राम, बबलू, साक्षात्कार, मनोज वर्मा द्वारा लिया गया, 25 मार्च 2024
18. वही
19. चंद, जगदीश, साक्षात्कार, मनोज वर्मा द्वारा लिया गया, 23 मार्च 2024
20. शर्मा, राजीव, हिमाचल प्रदेश के अवनद्ध वाद्य तथा वादन शैलियाँ, सत्यम पब्लिशिंग हाउस, 2019, पृ॰ 108 – 112
21. दिलैक, गोपाल, हिमालय में संस्कृति के रंग, शिमला, शकुंतलम पेराडाइज़, 2016, पृ॰ 120 – 122